मेरी माँ

लखनऊ कांग्रेस में जाने की मेरी बड़ी इच्छा थी। दादीजी और पिताजी मना करते रहे, किंतु मेरी माताजी ने मुझे खर्च करने के लिए रुपए दे ही दिए। उसी समय शाहजहाँपुर में सेवा-समिति का आरंभ हुआ था। मैं बड़े उत्साह के साथ सेवा-समिति में सहयोग देता था। पिताजी और दादीजी को मेरे ये कार्य पसंद नहीं थे, किंतु माताजी मेरा उत्साह इस प्रकार के कार्यों में भंग न होने देती थीं। इस कारण उन्हें अकसर पिताजी की डाँट-फटकार तथा दंड सहन करना पड़ता था। वास्तव में, मेरी माताजी देवी थीं। मुझमें जो कुछ जीवन तथा साहस आया है, वह मेरी माताजी तथा गुरुदेव श्री सोमदेव जी की कृपाओं का ही परिणाम है। दादीजी और पिताजी मेरे विवाह के लिए बहुत अनुरोध करते, किंतु माताजी यही कहतीं कि शिक्षा ग्रहण करने के बाद ही विवाह करना उचित होगा। माताजी के प्रोत्साहन तथा सद्व्यवहार ने मेरे जीवन में ऐसी दृढ़ता उत्पन्न की कि किसी आपत्ति तथा संकट के आने पर भी मैंने अपने संकल्प को न त्यागा।

एक बार मेरे पिताजी दीवानी मुकदमे में किसी पर दावा करके वकील से कह गए थे कि कोई काम हो, तो वह मुझसे करा लें। कुछ आवश्यकता पड़ने पर वकील साहब ने मुझे बुलावा भेजा और कहा कि मैं पिताजी के हस्ताक्षर वकालतनामे पर कर दूँ। मैंने तुरंत उत्तर दिया कि यह तो धर्म विरुद्ध होगा। इस प्रकार का पाप मैं कदापि नहीं कर सकता हूँ। वकील साहब ने मुझे बहुत समझाया कि मुकदमा खारिज हो जाएगा, किंतु मुझ पर कुछ भी प्रभाव न हुआ और मैंने हस्ताक्षर नहीं किए। मैं अपने जीवन में हमेशा सत्य का आचरण करता था, चाहे जो भी हो जाए, सत्य बात कह देता था।

ग्यारह वर्ष की उम्र में मेरी माताजी विवाह कर शाहजहाँपुर आई थीं। उस समय वह नितांत अशिक्षित एक ग्रामीण कन्या के समान थीं। शाहजहाँपुर आने के थोड़े दिनों बाद ही दादीजी ने अपनी छोटी बहन को बुला लिया। उन्होंने माताजी को गृहकार्य की शिक्षा दी। थोड़े ही दिनों में माताजी ने घर के सब काम-काज को समझ लिया और भोजन आदि का ठीक-ठाक प्रबंध करने लगीं। मेरे जन्म होने के पाँच या सात वर्ष बाद उन्होंने हिंदी पढ़ना आरंभ किया। पढ़ने का शौक उन्हें स्वयं ही पैदा हुआ था। मोहल्ले की सखी-सहेली जो घर पर आया करती थीं, उन्हीं में जो शिक्षित थीं, माताजी उनसे अक्षर-बोध करतीं। इस प्रकार घर का सब काम कर चुकने के बाद जो कुछ समय मिल जाता, उसमें वे पढ़ना-लिखना सीखतीं। परिश्रम के फल से थोड़े ही दिनों में वे देवनागरी पुस्तकों का अध्ययन करने लगीं। छोटी आयु में मेरी बहनों को माताजी ही शिक्षा दिया करती थीं। मैंने जब से आर्य समाज में प्रवेश किया, तब से माताजी से खूब वार्तालाप होता था।

उस समय की अपेक्षा अब उनके विचार भी कुछ उदार हो गए थे। यदि मुझे ऐसी माता न मिलती तो मैं भी अति साधारण मनुष्य की भाँति संसार चक्र में फँसकर अपना जीवन-निर्वाह करता। शिक्षादि के अतिरिक्त क्रांतिकारी जीवन में भी उन्होंने मेरी वैसी ही सहायता की थी जैसी मेदिनी की उनकी माता ने की थी। माताजी का सबसे बड़ा आदेश मेरे लिए यही था कि मेरे द्वारा किसी की प्राणहानि

न हो। उनका कहना था कि अपने शत्रु को भी कभी प्राणदंड न देना। उनके इस आदेश की पूर्ति करने के लिए मुझे मजबूरन एक-दो बार अपनी प्रतिज्ञा भंग करनी पड़ी थी।

जन्मदात्री जननी! मुझे इस जीवन में तो तुम्हारा ऋण उतारने का प्रयत्न करने का भी अवसर न मिला। इस जन्म में तो क्या यदि अनेक जन्मों तक भी मैं प्रयत्न करूँ तो भी तुमसे उऋण नहीं हो सकता हूँ। जिस प्रेम तथा दृढ़ता के साथ तुमने इस तुच्छ जीवन का सुधार किया है, वह अवर्णनीय है। मुझे जीवन की प्रत्येक घटना का स्मरण है कि तुमने किस प्रकार अपनी देववाणी का उपदेश देकर मेरा सुधार किया है। तुम्हारी दया से ही मैं देश-सेवा में संलग्न हो सका हूँ। धार्मिक जीवन में भी तुम्हारे ही प्रोत्साहन ने मेरी सहायता की है।

मैंने जो कुछ शिक्षा ग्रहण की है, उसका भी श्रेय माताजी को ही जाता है। जिस मनोहर रूप से तुम मुझे उपदेश दिया करती थीं, उसका स्मरण कर मुझे तुम्हारी मंगलमयी मूर्ति का ध्यान आ जाता है और मेरा मस्तक नीचे झुक जाता है। तुम्हें यदि मुझे ताड़ना भी देनी होती थी, तो बड़े स्नेह से हर बात को मुझे समझा दिया करती थीं। यदि मैंने धृष्टतापूर्ण उत्तर दिया, तब तुमने प्रेम भरे शब्दों में यही कहा कि तुम्हें जो अच्छा लगे, वह करो, किंतु ऐसा करना ठीक नहीं है, इसका परिणाम अच्छा न होगा। जीवनदात्री! तुमने इस शरीर को जन्म देकर केवल पालन-पोषण ही नहीं किया, बल्कि आत्मिक, धार्मिक तथा सामाजिक उन्नति में सदैव तुम्हीं मेरी सहायिका रहीं। सभी जन्मों में परमात्मा मुझे ऐसी ही माता दे।

महान-से-महान संकट में भी मेरी मातजी ने कभी मुझे अधीर नहीं होने दिया। सदैव अपनी प्रेम भरी वाणी को सुनाते हुए मुझे सांत्वना देती रहीं। तुम्हारी दया की छाया में मैंने अपने संपूर्ण जीवन में कभी कष्ट अनुभव न किया। इस संसार में मेरी किसी भी भोग-विलास तथा ऐश्वर्य की इच्छा नहीं है। केवल एक इच्छा है, वह यह है कि एक बार श्रद्धापूर्वक तुम्हारे चरणों की सेवा करके अपने जीवन को सफल बना लेता। किंतु यह इच्छा पूर्ण होती दिखाई नहीं देती है, क्योंकि अब तुम्हें मेरी मृत्यु की दुखभरी ख़बर सुनाई जाएगी। माँ! मुझे विश्वास है कि तुम यह समझकर धैर्य धारण कर लोगी कि तुम्हारा पुत्र माताओं की माता भारत माता की सेवा में अपने जीवन को बलि-वेदी की भेंट कर गया और उसने तुम्हारी कोख को कलंकित नहीं किया एवं अपनी प्रतिज्ञा पर दृढ़ रहा। जब स्वाधीन भारत का इतिहास लिखा जाएगा, तो उसके किसी पृष्ठ पर उज्ज्वल अक्षरों में तुम्हारा भी नाम लिखा जाएगा। गुरु गोविंद सिंह जी की धर्मपत्नी ने जब अपने पुत्रों की मृत्यु की ख़बर सुनी, तो वे बहुत प्रसन्न हुईं और उन्होंने गुरु के नाम पर धर्म-रक्षार्थ अपने पुत्रों के बलिदान पर मिठाई बाँटी। जन्मदात्री! मुझे वर दो कि अंतिम समय में भी मेरा हृदय किसी प्रकार विचलित न हो और तुम्हारे चरण कमलों को प्रणाम कर मैं परमात्मा का स्मरण करता हुआ इस शरीर का त्याग करूँ।

–रामप्रसाद बिस्मिल